वर्ष : 1, अंक : 1
विक्रम संवत 2075 अश्विन
(अक्टूबर-2018)

आर्ष क्रान्ति

वैदिक समाज व्यवस्था के लिए समर्पित

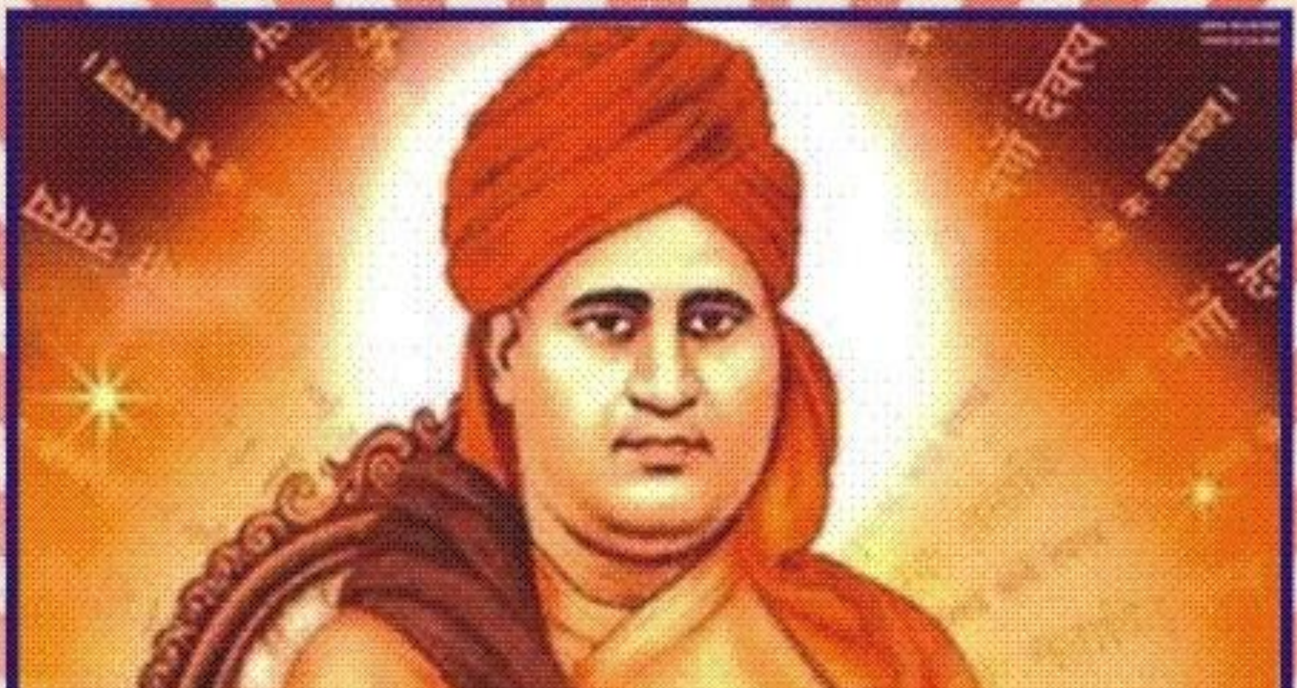

आर्य लेखक परिषद, दिल्ली

ओ३म्

आर्य लेखक परिषद् का मुख पत्र

आर्ष क्रान्ति

अक्टूबर २०१८

वर्ष–१ अंक–१ आश्विन्,
विक्रम संवत् २०७५
दयानान्दाब्द– १९५
कलि संवत् – ५११९
सृष्टि संवत् –१,९६,०८,५३,११९

प्रधान सम्पादक
वेदप्रिय शास्त्री
(७६६५७६५११३)

❖

समन्वय सम्पादक
अखिलेश आर्येन्दु
(८१७८७१०३३४)

❖

सह सम्पादक
प्रांशु आर्य (कोटा)
(६६६३६७०६४०)

❖

आकल्पन
कुलदीप कुलश्रेष्ठ (दिल्ली)
(८१३०२८७७०७)

❖

सम्पादकीय कार्यालय
ए–११,त्यागी विहार, नांगलोई,
दिल्ली–११००४१
चलभाष– ८१७८७१०३३४

अनुक्रम

विषय	पृष्ठ
१ आर्ष क्रान्ति	०३
२ प्रभु आप आर्यों के रक्षक......	०५
३ समाज का सर्वांगीण विकास	०६
४ नास्तिक कौन ?	०८
५ पर्यावरण की समस्या......	०९
६ डॉ भवानीलाल भारतीय......	१२
७ दयानन्द की क्रान्ति शेष है!	१६
८ मूर्तिपूजा के अभिशाप से हिन्दू समाज......	१७
९ उत्तानपादासन के लाभ	१८
१० नित जीवन के संघर्षों से	१९

ईमेल – aryalekhakparishad@gmail.com
वेबसाइट – www.aryalekhakparishad.com
फेसबुक – https://www.facebook.com/आर्यलेखकपरिषद्

सम्पादकीय

आर्ष क्रान्ति

आर्ष क्रान्ति का प्रथम अंक पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करते हुए मन किसी भावी आशा से उत्साहित और प्रसन्न है। उन लोगों के लिए जो अपने मनुष्य जीवन को सार्थक और सफल करना चाहते हैं, यह पत्रिका प्रेरणाप्रद और मार्ग दर्शिका बनेगी। यह उन पुरातन महर्षियों का प्रतिनिधित्व करने जा रही है जिनके लिए विश्व का प्राचीनतम मानवी धर्मग्रन्थ वेद कहता है –

भद्रमिच्छन्तः ऋषयः स्वर्विदस्तपोदीक्षामुनिषेदुरग्रे।
ततो राष्ट्रं बलमोजश्च जातम् तदस्मैदेवा उपसंनमन्तु।।

उन्हीं की परम्परा में उन्हीं का प्रतिनिधित्व करने वाला एक महान् व्यक्तित्व वर्तमान में हमारे समक्ष है **महर्षि दयानन्द सरस्वती** का। यह हिमालय पर्वत के सामान बलिष्ठ, सुदृढ़, उच्च और उसके शिखर पर सूर्य किरणों से चमकती हिमराशि के समान धवल और समुज्वल है। इसे आदर्श मान कर, जीवन में जीकर कोई भी मनुष्य गर्व का अनुभव करते हुए स्वयं को धन्य बना सकता है। दिवंगत हो चुके इस महापुरुष के विचारों से संसार की पाखण्डी शक्ति अब तक भी आँखें मिलाने से कतराती है। दानवता काँपती हुई बगले झाकने लगती है। 'आर्ष क्रान्ति' इसी महामानव के उदात्त चरित्र और विचारों के साथ उसके द्वारा प्रदत्त जीवनदर्शन की प्रेरक व परिचायक है, रहेगी। **पाठको! अद्वितीय और अनुपम है आपका आदर्श।**

यह अपनी पूजा प्रतिष्ठा की बात ही नहीं करता, किसी सम्प्रदाय प्रवर्तन, किसी कंठी–तिलक का प्रचलन नहीं करता। उसका कहना है की वेद मनुष्य मात्र का परमेश्वर प्रदत्त धर्मग्रन्थ है, जिसे ब्रह्मा से लेकर जैमिनी पर्यंत ऋषि लोग मानते और उपदेश करते रहे हैं, उसे ही सब लोग मानो। वह एक ईश्वर, एक धर्म और सचमुच के उत्तम मनुष्य का परिचय कराता हैं ;एक श्रेष्ठ समाज और श्रेष्ठ संसार बनाने की बात करता हैं, सबके लिए शिक्षा और संस्कारों की बात करता हैं। वह कहता हैं की **केवल वेद ही मनुष्य** के लिए वास्तविक उत्कृष्ट जीवन दर्शन प्रदान करते हैं, वही ज्ञान विज्ञान का परमेश्वर प्रदत्त मूल स्रोत है। उसकी घोषणा है की 'वेद सब सत्य विद्याओं की पुस्तक हैं'। अतः 'वेदो की ओर लोटो'। 'वेद को प्रतिष्ठा प्रदान करो'। वेद प्रतिपादित जीवन दर्शन को आत्मसात करो, जीवन धन्य हो जायेगा।

कभी पराधीन भारत में महर्षि दयानन्द ने एक आन्दोलनात्मक क्रान्ति का सूत्रपात किया था जो एक प्रचंड आग की तरह जलती हुई पाप–पाखण्ड को भस्म करने वाली थी। प्रारम्भ में उसके परिणाम अत्यंत उत्साहवर्धक रहे। देश को पराधीनता से मुक्त कराने में, स्वाभिमान और राष्ट्रवादिता जगाने में, सामंती शोषण, नारी उत्पीड़न और धार्मिक पाखण्ड से मुक्ति दिलाने में, इसका महत्वपूर्ण योगदान रहा जो इतिहास के पन्नों में स्वर्णिम अक्षरों में अंकित है।

परन्तु स्वतंत्रता के पश्चात् वह आग धीरे–धीरे बुझती जा रही है। कुछ लोग उसे योजना बद्ध ढंग से बुझाने में लगे हुए हैं। पाखण्डी साधु सन्तवेशी, पण्डे पुरोहितों को तो इसे बुझाना ही था, देश के धूर्त राजनिती बाज लोग भी इसे सहन नहीं करते। वे भरसक यत्न करते हैं कि उनकी चर्चा में कही भी स्वामी दयानन्द का नाम न आने पाए। वे उसे राष्ट्र निर्माण या लोकोपकार का किंचित भी श्रेय नहीं देना चाहते।

दूसरी ओर उसके द्वारा संस्थापित संगठन 'आर्य समाज' बहुत विकृत और अशक्त हो चूका है। कुछ दोहरे चरित्र के लोगों के कारण, नैतिक और चारित्रिक पतन के कारण और धर्मप्रचार को व्यापार और मुनाफाखोरी का साधन बना देने के कारण वह आग बुझती ही जा रही है। इसमें कोई सामग्री, घृत और समिधा डालने वाला नहीं रहा। ये आर्य समाज जो कभी क्रान्ति के केंद्र थे आज उलटे सीधे शादी, विवाह करवाने और लूट के अड्डे बन चुके हैं, इसी अर्थ में विख्यात होकर भले लोगों की उपेक्षा और घृणा के पात्र बन गए हैं। इसके शिक्षा संस्थान में चारित्रिक पतन तेजी से होता जा रहा है। दशा बहुत ही शोचनीय है।

ऐसी विषम स्थिति में 'आर्ष क्रान्ति' आशा का संचार करके उक्त अग्नि में इंधन डालने और यज्ञ को विध्वंस होने से बचाने में सहयोगी होगी।इसी उद्देश्य से प्रबुद्ध पाठकों तक इसे पहुँचाने का मन बनाया है। आशा है पत्रिका में परोसी गई सामग्री पाठकों को रुचिकर प्रेरक और कुछ कर डालने की प्रेरणा करने वाली होगी।

यह पत्रिका **'आर्य लेखक परिषद्'** के द्वारा प्रस्तुत की जा रही है। परिषद् महर्षि दयानन्द और वेद को विश्व स्तर पर प्रतिष्ठित करने की इच्छा रखती है। इसी उद्देश्य से उत्तम प्रचार सामग्री तैयार करने, उत्कृष्ट लेखन को पुरस्कृत कर प्रकाशित करने, नए लेखक व पत्रकारों को प्रशिक्षण देने तथा ग्राम स्तर तक वेद और महर्षि दयानन्द को परिचित कराने की योजना पर काम कर रही है। उक्त कार्यों के लिए परिषद् को साधन चाहिए। अतः जो दानी महानुभाव इस कार्य में रूचि रखते हो वे हमे साधन उपलब्ध कराएँ, आर्थिक सहयोग दें। आप अपनी ओर से किसी प्रसन्नता के अवसर पर, अपने किसी प्रिय जन की स्मृति में परिषद् को स्थिर निधि बना कर दे सकते हैं, जिसके ब्याज से परिषद् उत्कृष्ट लेखकों को पुरस्कृत करती रहेगी, व्याख्यान मालाएँ आयोजित करेगी। परिषद् को उत्कृष्ट प्रचार साहित्य भी छपवा कर दे सकते हैं। इस साहित्य की रूप रेखा परिषद् स्वयं बनाएगी।

इसके साथ ही आप जानते हैं कि क्रान्ति तो बलिदान और त्याग मांगती है। महर्षि दयानद प्रवर्तित शेष क्रान्ति को सम्पूर्णता की ओर ले जाने के लिए त्याग और बलिदान की भावना से युक्त ऐसे नवयुवक चाहिए जो इसके लिए ही समर्पित जीवन वाले हो कर कार्य करें। जो राजनीति बाजों के पालतू पिल्ले न बनकर स्वाधीन राष्ट्रवादी और विश्व हितैषी बनकर जीने वाले हों। रोजी–रोटी के खोजी स्वार्थी, अवसरवादी और कायरों की आवश्यकता नहीं है। वीर–धीर नवयुवक हमसे मिलकर संगठन का हिस्सा बन सकते हैं।

परिषद् के कार्य संचालन हेतु जो प्रभारी प्रत्येक प्रान्त में नियुक्त हुए है उनसे हमारा निवेदन है कि वे उक्त कार्य में अच्छे सहयोगी की भूमिका निभाएं। एक संवाददाता के रूप में पूरे प्रान्त के मुख्य समाचारों से चित्र सहित अवगत कराते रहें। अपना स्वयं का चित्र और संक्षिप्त परिचय भेज दें ताकि हम पत्रिका में उसे प्रकाशित कर सकें। अपने–अपने प्रान्तों से परिषद् को साधन सामग्री से समृद्ध करवाने का पूर्ण प्रयास करें। आपकी अति कृपा होगी। लेखक परिषद् के अधिवेशन और लेखक सम्मलेन आयोजित करवाने के लिए भी समृद्ध जनों को प्रेरित करते रहें। यही आशा करके पत्रिका का प्रथम अंक आप सब को सादर समर्पित है।

सा मा सत्योक्तिः परियातु विश्वतः।

–वेदप्रिय शास्त्री

आर्ष क्रान्ति के सुधो पाठकों से–

आर्ष क्रान्ति का प्रथम अंक आप को अवलोकनार्थ, स्वाध्याय और समीक्षार्थ आप के अंतरजाल पर है। हो सकता है, प्रथम अंक आप को क्रान्तिकारी ढंग से प्रभावित करने में प्रभावशाली न हो पाया हो लेकिन इसका अर्थ यह नहीं कि अगला अंक भी इसी तरह का होगा। आप के अमूल्य और निष्पक्ष सुझाव प्रत्रिका को अत्यन्त उपयोगी, प्रेरणाप्रद, संवाहक और समाज सुधार की दिशा में एक मील के पत्थर की भूमिका निभा सकते हैं। यह भी हो, आप की मान्यताओं, धारणाओं और विचारों से हटकर हो, लेकिन एक सुसंस्कृत, आदर्श और मानव मूल्य की रक्षा के मिशन के लिए पत्रिका समर्पित है। इस दृष्टि से आप का पत्रिका के प्रति सद्भावना मिलनी चाहिए। यदि आप को किसी कारण से पत्रिका के अवलोकन के लिए समय नहीं है, कृपा करके अवगत अवश्य करा दें।

विशेष ––

मित्रो,

आप पत्रिका सम्बन्धी कोई प्रतिक्रिया, सुझाव या पूछताछ कृपया ई–मेल पर ही भेंजे। फिर भी बहुत आवश्यक होने पर आप सायं 8 से 9 के मध्य ही चलभाष (मोबाईल) से सम्पर्क करें।

सद्भावी

अखिलेश आर्येन्दु

(८१७८७१०३३४)

प्रभु! आप आर्यों के रक्षक व दुष्टों को दण्डित करने वाले हों!

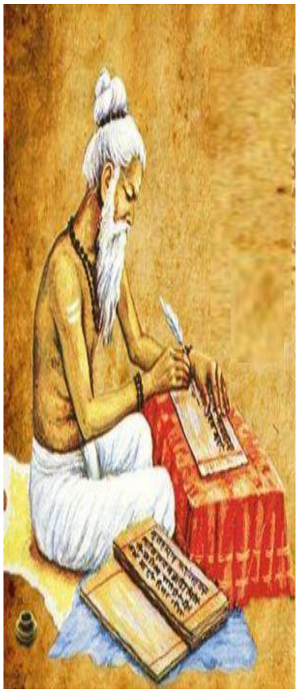

वि जानीह्यार्यान् ये च दस्यवो बर्हिष्मते रन्धया शास्दव्रतान् ।
शाकी भव यजमानस्य चोदिता विश्वेत्ता ते सधमादेषु चाकन।।

– ऋग्वेद० मंडल ०१। सूक्त ५१। मंत्र ०८

व्याख्यान– हे यथायोग्य सब कुछ जानने वाले ईश्वर ! आप 'आर्यन' विद्या धर्मादि उत्कृष्ट स्वभावचरणयुक्त आर्यों को जानो 'ये च दस्यवः' और जो नास्तिक, डाकू, चोर, विश्वासघाती, मूर्ख, विषयलम्पट, हिंसादीदोषयुक्त उत्तम कर्म में विघ्न करने वाले, स्वार्थी स्वार्थसाधन में तत्पर, वेदविद्याविरोधी, अनार्य (अनाड़ी) मनुष्य 'बर्हिष्मते' सर्वोपकारक यज्ञ के विध्वंस करने वाले हैं इन सब दुष्टों को आप 'रन्धय' (समूलान् विनाशाय) मूलसहित नष्ट कर दीजिये और 'शासदव्रतान्' ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ, संन्यासादी धर्मानुष्ठानव्रतरहित वेदमार्गोच्छेदक अनाचारियों का यथायोग्य शासन करो (शीघ्र उन पर दंड निपातन करो) जिससे वे भी शिक्षायुक्त होके शिष्ट हों अथवा उनका प्राणान्त हो जाय किंवा हमारे वश में ही रहें 'शाकी' तथा जीव को परम शक्तियुक्त शक्ति देने और उत्तम कामों में प्रेरणा करनेवाले हो, आप हमारे दुष्ट कामों से निरोधक हो, मैं भी 'सधमादेषु' उत्कृष्ट स्थानों में निवास करता हुआ 'विश्वेत्ता ते' तुम्हारी आज्ञानुकूल सब उत्तम कर्मों की 'चाकन' कामना करता हूँ, सो आप पूरी करें।

भावार्थ–मनुष्यों को दस्यु अर्थात् दुष्ट स्वाभाव को छोड़ कर आर्य अर्थात् श्रेष्ठ स्वभावों के आश्रय से वर्तना चाहिये। वे ही आर्य हैं की जो उत्तम विद्यादि के प्रचार से सबके उत्तम भोग की सिद्धि और अधर्मी दुष्टों के निवारण के लिये निरंतर यत्न करते हैं। निश्चय करके कोई भी मनुष्य आर्यों के संग उनसे अध्ययन व उपदेशों के विना यथावत् विद्वान, धर्मात्मा, आर्यस्वभाव युक्त होने को समर्थ नहीं हो सकता। इससे निश्चय करके आर्य के गुण और कर्मों का सेवन कर निरंतर सुखी रहना चाहिये।

आर्यभाषा हिन्दी ही पूरे भारत को एक सूत्र में पिरो सकती है – महर्षि दयानन्द सरस्वती

समाज का सर्वांगीण विकास कैसे हो?

- डॉ रूपचन्द्र 'दीपक'

प्राचीन काल में भारतीय समाज **'वेदों के आधार'** पर संगठित था। फलस्वरुप, यह ज्ञान में 'जगद्गुरु' था, शक्ति में 'सर्वोच्च' था, धन में 'सोने की चिड़िया' और सुख में 'आदर्श' था। छान्दोग्य उपनिषद् (प्रपाठक–५ खण्ड–११, श्लोक–५) में केकेय देश का राजा अश्वपति कहता है –

'न में स्तेनो जनपदे न कदर्यो न मद्यपो,
न–अनाहिताग्निः,न–अविद्वान,न स्वैरी स्वैरिणी कुतः।'

अर्थात् मेरे राज्य में कोई चोर नहीं, कोई कृपण नहीं, कोई मद्यप नहीं, सब अग्निहोत्री हैं, सब विद्वान हैं, कोई स्त्री या पुरुष व्यभिचारी नहीं है।

यह केकेय राज्य 'पंजाब में ब्यास नदी के क्षेत्र' में था। दूसरे शब्दों में, यह भारत के राज्य का वर्णन है। महाभारत–युद्ध के बाद भारतीय समाज में दोष उत्पन्न हो गये। अतः सुधार और उसके बाद पुनः सुधार की आवश्यकता हुई।

महात्मा बुद्ध और महावीर जैन (५०० ईसा पूर्व) ने समाज में अनेक सुधार किये। इसके फलस्वरुप अनेक दोष दूर हुए किन्तु अनेक दोष और प्रबल हो गये। इन दोनों सुधारकों ने समाज में कुछ समरसता कायम की किन्तु बहुत अधिक नास्तिकता उत्पन्न कर दी। इन्होंने समाज के 'वैदिक स्वरूप' को ही दोषी बता दिया। सुधार तो यह अपेक्षित था कि वैदिक–व्यवस्था के नाम पर जो वेद–विरुद्ध कुप्रथाएँ पनप गई थी, उनहे दूर किया जाता। परन्तु कुछ बुरे कि जगह भला हो गया और कुछ भले कि जगह बुरा हो गया।

शताब्दियों के बाद ऋषि दयानन्द का प्रादुर्भाव हुआ। उन्होंने भारत माता की विदेशी बेड़ियाँ काटने के लिए हजारों देशभक्तों को प्रेरित किया। नारी जाति की मर्यादा बहाल की। चतुर्थ वर्ण को आर्य घोषित किया। उद्योग–धन्धों की अनिवार्यता समझायी। अंधविश्वासों पर इतना भीषण प्रहार किया जितना इतिहास में किसी ने न किया था। धर्म के नाम पर हो रहे अनैतिक आचारों को अमान्य किया। व्यक्तिगत आचरण कि पवित्रता को मूर्तरूप दिया। और वेदों को उनके उच्च स्थान पर प्रतिष्ठित किया। उन्होंने प्रावधान किया कि किस प्रकार वेद के अनुसार शिक्षा हो; वेद के अनुसार विवाह हो; वेद के अनुसार कृषि व्यापर हो; वेद के अनुसार शासन व्यवस्था हो; और वेद के अनुसार ही समाज चले।

धर्मयुद्ध के पाँच हजार वर्ष बाद ऋषि दयानन्द ने स्पष्ट कर दिया कि भारतीय समाज कैसा होना चाहिए। विडम्बना यह हैं कि इसे ठीक–ठीक ग्रहण करने वाले लोग १३० करोड़ में १३ लाख के लगभग अर्थात ०.१% हैं। इतने कम लोग सुधार कर तो सकते हैं किन्तु तब ही कर सकते हैं जब उनके बीच अन्तर्विरोध न हों। हम यही आशा करते हुए सुधार के अतीव आवश्यक बिंदु प्रस्तुत कर रहे हैं :–

जीने का अधिकार

विश्व में २५ करोड़ से अधिक जनसँख्या वाले केवल ४ देश हैं –**चीन, भारत, अमेरिका और इंडोनेशिया**। भारत में २५ करोड़ लोग 'गरीबी रेखा' से नीचे अर्थात् अतिनिर्धन हैं। इन्हे प्रतिदिन भर पेट भोजन नहीं मिलता। इनके लिए रोटी भोग है, रोटी योग है और रोटी ही मोक्ष है। इनकी दृष्टि में संसद का अधिवेशन, ओलम्पिक खेल और कम्प्यूटर प्रोग्रामिंग सब निरर्थक हैं। इन्हे जीने का आधार और जीने का अधिकार चाहिए। इनकी माँग देशवासियों की सबसे छोटी और सबसे पहली माँग है। हमारे समाज में अन्न की कमी नहीं किन्तु वितरण–व्यवस्था में दोष है। ये दोष पूर्णतः दूर होने चाहिए ताकि प्रत्येक पेट प्रतिदिन दो बार भर सके। भूख से मुक्त समाज का ही सर्वांगीण विकास संभव है।

सार्वजनिक शुचिता

कपिल और कणाद का देश आज मिलावट और भ्रष्टाचार में आकण्ठ डूबा हैं। दूध–घी

मानव मात्र को अपने स्वधर्म का पालन करने में अत्यंत सजग रहना चाहिए।

में, चावल–दाल में और दवाओं में भी मिलावट हो रही है। मिलावट को लोग पाप या अपराध समझते होंगे, ऐसा प्रतीत नहीं हो रहा। गाँव के भोले–भाले लोग, उच्च शिक्षा प्राप्त डॉक्टर–इंजीनियर और अरबपति व्यापारी भी मिलावट करते पाये गये हैं। लोग मिलावट–कर्ताओं की शिकायत नहीं करते और उनसे रिश्तेदारी भी नहीं तोड़ते। मिलावट का परिणाम उत्तम स्वास्थ, उत्तम बुद्धि और उत्तम सेवा नहीं हो सकता। भारत छोड़कर जाने वाले कुछ बुद्धिजीवी केवल मिलावट छोड़ कर जा रहे हैं।

भ्रष्टाचार पर भाषण देना हो तो लोग भ्रष्टाचार–उन्मूलन पर धरा प्रवाह बोलते हैं। परन्तु लाभ–हानि का प्रश्न सामने आते ही १८० अंश घूम जाते हैं। उन्हें अरबों रुपयों की सरकारी योजनाओं से कोई मोह नहीं की वे पूरी हों अथवा ठप हो जाएँ। सरकारी अधिकारी दूसरों को ही दण्ड देते अच्छे लगते हैं। हमारा काम हो तो उन्हें घूस लेकर, तथ्य बदलकर व बदनाम होकर भी करना चाहिए। दुर्भाग्य है कि हमारे देश में शुचिता–सम्पन्न अधिकारी निंदा का पात्र बनते और सुधारक लोग शत्रु माने जाते हैं। इनमे से कोई अचानक कष्ट में फँस जाए तो प्रायः लोग प्रसन्न होते हैं। बुद्धिजीवियों को यह स्थिति उलटनी होगी। सार्वजनिक शुचिता से ही भारत देश महान था। सार्वजनिक शुचिता से ही भारतीय समाज पुनः महान बनेगा।

शिक्षा से सम्पूर्णता

'शिक्षा' शब्द 'शिक्ष्' धातु से बनता है, जिसके अर्थ हैं–अध्ययन, निष्णात होने की इच्छा और ज्ञान की प्रक्रिया। शिक्षा प्राप्त व्यक्ति के लक्षण हैं कि वह सत्य बोलता है झूठ नहीं; सब के लिए जीता हैं मात्र अपने लिए नहीं; ईश्वर–जीव–प्रकृति के स्वरूप को समझता है; प्रत्येक पाप एवं अपराध से बचता है; और समाज में सर्वांगीण विकास का प्रयत्न करता है। शिक्षा से व्यक्ति एवं समाज में सम्पूर्णता आती है।

लार्ड मैकाले ने शिक्षा कि **पद्दति** बदलकर भारत को इंडिया बना दिया। हम भी शिक्षा कि **पद्दति** को बदलकर इंडिया को पुनः भारत बना सकते हैं। ध्यान रहे की शिक्षा 'पूर्ण' और सुधारक 'परिपक्व' होनी चाहिए। ऋषि दयानन्द के अनुसरण में सुधार के बिंदु निम्नलिखित हैं –

१. शिक्षा की गुरुकुलीय **पद्दति** हो। सबकी शिक्षा अनिवार्य, निःशुल्क तथा सामान हो। पाठ्यक्रम में आधुनिक विषय भी सम्मलित किये जाएँ।

२. गुण–कर्म–स्वभाव के आधार पर विवाह हो; अर्थात् न तो लड़के–लड़की के आकर्षण मात्र के आधार पर और न ही माता–पिता के आदेश मात्र से।

३. विद्यालयों अथवा राजसेवाओं में जातीय अथवा आर्थिक, किसी भी आधार पर आरक्षण न हो; देशहित सर्वोपरि रखा जाए।

४. विधान सभाओं के चुनाव स्वतंत्र और निष्पक्ष हों। जाति, धन, या बल से प्रभावित न हों। सब लोग मत अवश्य डालें; किसी की विवशता हो तो वह अधिकारियों द्वारा प्रमाणित हो। जनप्रतिनिधियों के हाईस्कूल उत्तीर्ण होने की चल रही माँग अभी अपरिपक्व है। क्या एम.ए पास सभी व्यक्ति अच्छे मनुष्य होते हैं ?

५. आवश्यक होने पर वेद के निभ्रांत विद्वानों की सहमति से सुधार एवं संशोधन कार्य किया जाएँ।

मेरा देश मेरा धर्म

हमारे लिए भारत देश और वैदिक धर्म संपत्ति व कामनाओं से ऊपर तो है ही, प्राणों से भी ऊपर है। आइए, अपने इस संकल्प को दोहराएँ और कार्यरूप प्रदान करें। अपने समाज के सर्वांगीण विकास में अपनी–अपनी भागीदारी निभाएँ।****************

वेद सब सत्य विद्याओं की पुस्तक है,

वेद का पढ़ना–पढ़ाना और सुनना–सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।

नास्तिक कौन?

- सन्त समीर

नास्तिक–अर्थात् जो ईश्वर को न माने। यही इसका प्रचलित अर्थ है। मतलब यह कि ईश्वर में विश्वास करने वाले आस्तिक हैं भले ही वे किसी भी धर्म–सम्प्रदाय के हों। नास्तिक हुए जैन, बौध्द, चार्वाक; या आधुनिक साम्यवादी है किस्म के लोग। लेकिन नास्तिकता की मूल परिभाषा कुछ और कहती है। मूल परिभाषा है –**'नास्तिको वेद निन्दकः'**। यानी जो वेद निन्दक हैं, वेद विरोधी हैं, वेद को अमान्य करते हैं, वे नास्तिक हैं।

ध्यान देने पर पता चलेगा कि यह प्राचीन और मूल परिभाषा ही नास्तिकता और आस्तिकता का अर्थ ज्यादा सही ढंग से व्यक्त करती है और विज्ञानवाद का प्रतिपादक भी है। 'विद्' धातु से निष्पन्न 'वेद' शब्द का मूल अर्थ है–ज्ञान। ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्वेद इसीलिए वेद कहे जाते हैं क्योंकि माना जाता है कि इनमें मनुष्य जीवन के लिए आवश्यक मूल ज्ञान की बातें बतायी गई हैं। इस तरह 'नास्तिको वेद निन्दकः' का अर्थ हुआ कि जो ज्ञान का विरोध करे, ज्ञान को प्रतिष्ठा न दे, अमान्य करे वह नास्तिक है। थोड़ा और गहरे उतरें तो पता चलेगा कि ज्ञान का स्थूल रुप है– अस्तित्व, वजूद। इस संसार में जो कुछ है अस्तित्वमान है। सूक्ष्म, स्थूल असंख्य मूर्तिमान पदार्थों से लेकर अमूर्त विचारों, भावनाओं तक सब कुछ अस्तित्व के ही रूप हैं। अस्तित्व भाव से ही आस्तिक निकला है। अस्तित्व का स्वीकार आस्तिकता है, अस्तित्व का नकार नास्तिकता।

जीवनविद्या के प्रवर्तक बाबा नागराज कहते हैं, इस सृष्टि का सत्य है– अस्तित्व। इस अस्तित्व को जान लिया जाय तो जीवन का मर्म समझ में आ जाएगा और हम सहज, सुन्दर जीवन जीने लगेंगे। इस तरह देखें तो अस्तित्व में आस्था रखने वाले, उसे मानने वाले आस्तिक कहे जाने चाहिए। यही विज्ञानवाद है। इस तरह यह भी स्पष्ट होता है कि ईश्वर को न मानने वाले पन्थ, विचारधारा के लोग अस्तित्व को मानते हैं तो वे आस्तिक ही हैं। आज के साम्यवादी और विशेष रूप से विज्ञान को ही सब कुछ मानने वाले धुर आस्तिक हुए, क्योंकि वे अस्तित्व के या कहें 'अस्ति' भाव के पुजारी हैं। बल्कि देवी–देवता और भगवान में आस्था रखने वाले या धर्मभीरु लोग हो सकता है कि ज्यादा नास्तिक किस्म के सिध्द हों, क्योंकि ऐसा प्रायः देखा जाता है कि कई तरह के धार्मिक विश्वास ज्ञान का, संसार के यथार्थ सत्य या अस्तित्व का विरोध करते हैं। हो सकता है कई तरह की धार्मिक आस्थाएँ सिर्फ रुढ़ियाँ हों और सत्य से उनका दूर–दूर तक कोई रिश्ता ही न हो।

जीवन–व्यवहार में अस्तित्व भाव के स्वीकार का अर्थ है – जैसे हमारा अस्तित्व, वैसे ही हमसे इतर प्राणियों का भी अस्तित्व। इससे जीवन के प्रति सम्मान भाव पैदा होता है और समस्त जीव जगत् के सुख–दुःख के अहसास का यथार्थ भाव प्रबल बनता है। अस्तित्व को मान्य करने से ही सृष्टि के विविध पदार्थों के यथोचित उपयोग में लेने और प्रकृति –सम्मत जीवन जीने का विज्ञान–भाव पैदा होता है। यदि हम सृष्टि को जैसा चलना चाहिए, वैसा चलने देने में सहयोगी हैं, इस संसार में अपनी भूमिका कुशलता से निभाते हैं, तो सृष्टि में अस्तित्व की स्थिति का ही सम्मान करते हैं; और यदि, हम प्रकृति के नियमों का उल्लंघन करते हैं, सृष्टि के सुचारु रूप से संचालित होने में बाधा पहुँचाते हैं, तो इसका अर्थ है कि अस्तित्व भाव की ही उपेक्षा करते हैं। दूसरों को दुख देना, एक तरह से दूसरों के अस्तित्व की उपेक्षा है। महावीर स्वामी ने यदि कहा कि –जियो और जीने दो– तो इसका अर्थ यही है कि सिर्फ हमीं हम नहीं है इस संसार में, हमसे इतर भी हमारे जैसे अस्तित्व वाले हैं, इसलिए हमारे जैसा ही जीने का हक उनका भी बनता है। इस तरह देखें तो सृष्टि में अस्तित्व को स्वीकार करना, यानी प्रकृति के साथ समरसता और सहजता में जीना ही जीने की कला है, जीवन विद्या है और यही आस्तिकता है। इस सृष्टि में जीव–जगत से लेकर जड़–जगत् तक के आपसी अन्तर्सम्बन्धों को समझ लेना और अन्योन्याश्रितता की अनिवार्यता को हृदयंगम करके जीवन–व्यवहार चलाना अस्तित्व का स्वीकार है, सम्मान है, जीवन का ज्ञान है, आस्तिकता है। कुल निहितार्थ यही है कि अच्छे काम करने वाले आस्तिक हैं, भले ही वे देवी–देवताओं से दूर रहते हों और बुरे काम करने वाले, स्वयं का स्वार्थ साधने के लिए दूसरों का जीवन नष्ट करने वाले नास्तिक हैं, भले ही वे भाँति–भाँति के भगवानों और देवी–देवताओं के पूजा–पाठ में दिन गुजार देते हों।**

पर्यावरण की समस्या और उसका वैदिक समाधान

- अखिलेश आर्येन्दु

पर्यावरणीय मापदण्डों और विकास के मानकों को संतुलित करने की बहुत जरूरत है। हम बेहतर पर्यावरण की बात तो करते हैं लेकिन इसे बेहतर बनाए रखने के प्रति कितने संवेदित हैं, यह एक बड़ा सवाल है। हम न चाहते हुए भी प्रदूषित वायु में श्वास लेने के लिए मजबूर हैं। उदाहरण के तौर पर दिल्ली, हरयाणा और राजस्थान में धूम्रपान, शराब और अन्य तम्बाकू से बनी नशायुक्त चीजों का इस्तेमाल बहुत बड़ी तादाद में किया जाता है। इसकी वजह से लाखों लोग श्वास और आँख की बीमारियों के शिकार हो रहे हैं। धूम्रपान अशिक्षित स्त्री–पुरुष ही नहीं कर रहें, बल्कि पढ़े–लिखे लोग बहुत बड़ी तादाद में इस लत के आदी हैं। इससे पर्यावरण की गुणवत्ता ही नहीं कम हो रही है बल्कि बेहतर जीवन–शैली की संभावना भी क्षीण होती जा रही है।

वाशिंगटन यूनिवर्सिटी के वैज्ञानिकों के एक दल जिसका नेतृत्व जाने–माने पोलियोंटोलॉजिस्ट पीटर वार्ड ने किया के शोध के बाद रिसर्च रिपोर्ट में कहा गया कि यदि वातावरण में विषैली गैसों को छोड़ने और आक्सीजन को कम करने का सिलसिला इसी तरह जारी रहा तो आने वाले वक्त में 90 फीसदी जीवन का अंत हो सकता है। जिस तरह से तकरीबन 25 करोड़ वर्ष पहले पेरमियन युग में एक साथ धरती की सभी प्रजातियों का हो गया था। शोध से यह बात स्पष्ट हुई कि ग्लोबल वार्मिंग की जो स्थितियां 25 करोड़ साल पहले निर्मित हुई थी, कुछ ऐसी ही स्थितियां नए विकास के मॉडल अपनाने के बाद निर्मित हो रहीं हैं।

निरन्तर खराब होते पर्यावरण पर चिन्ता व्यक्त करते हुए महान खगोल वैज्ञानिक **स्टीफन हॉकिंस** ने कहा था–**'इंसान को अपने अस्तित्व की हिफाजत करने के लिए किसी और ग्रह पर बसेरा बनाने के लिए सोचना चाहिए।'** जाहिर है उनका संकेत खराब होते पर्यावरण और आने वाले खतरों की ओर निश्चित रूप से है। वैज्ञानिकों के मुताबिक पर्यावरण का 60 फीसदी हिस्सा बेहद खराब स्थिति में है। यह सब ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन में दिन–ब–दिन हो रही वृद्धि का नतीजा है। दुनिया में विकास का जो मॉडल अपनाया गया है, उससे पर्यावरण का जो विनाश हो रहा है, उससे देर सबेर जो स्तिथियाँ आने वाली हैं, दुनिया के वैज्ञानिक उसे लेकर चिन्तित हैं। लेकिन उनकी चिन्ताओं को दुनिया के विकसित देश गम्भीरता से नहीं ले रहे हैं।

वेदों में पर्यावरण की रक्षा, संरक्षण और मानव की इसमें भागीदारी को लेकर अनेक महत्वपूर्ण बातें कहीं गई हैं। जिन पंच यज्ञों का प्रतिदिन मानव को करने का आदेश वेद में दिया गया है उसमें अग्निहोत्र अर्थात् हवन करना भी सम्मिलित है। यह इस लिए कि हम प्रतिदिन मल–मूत्र से ही नहीं बल्कि अन्य अनेक विधियों से भी पर्यावरण को गंदा करते हैं। प्रतिदिन सुगंधित हवन सामग्री और गाय के घी से हवन करना आवश्यक बताया गया है और इसे कर्तव्य बताया गया है। अग्निहोत्र को आमतौर पर धार्मिक कर्मकांड में शामिल कर इसे संकुचित कर दिया जाता है, लेकिन वैज्ञानिक परीक्षणों से यह प्रमाणित हो चुका है कि हवन करने से न केवल वायु शुद्ध होती है बल्कि खाद्यान्न उत्पादन, अच्छी वर्षा, हरियाली का बने रहना और वातावरण में फैले विषैले कणों को खत्म करना भी इसके द्वारा होता है। वैसे तो हमारे पुरखों ने वैदिक वांग्मय में पर्यावरण की रक्षा, कृषि की उत्तमता, ऋतुचक्र के संतुलन बनाए रखने और वातावरण में व्याप्त रोगों के कीटाणुओं को खत्म करने का विधान यज्ञ के द्वारा लाखों वर्षों पहले वेदों और अन्य वैदिक ग्रंथों में प्रतिपादित कर दिया था। हवन यज्ञ की महत्ता को आज के आधुनिक समाज में पुनः स्थापित करके पर्यावरण की समस्याओं से ही नहीं, ग्लोबल वार्मिंग, सुनामी, अकाल, बेमौसम बरसात, अतिवृष्टि और महामारी को भी रोका जा सकता है। भारत के बाहर अमेरिका, जर्मनी, रूस, फ्रांस, इंग्लैड और अन्य देशों में यज्ञ का बड़े स्तर पर आयोजन करके यह परीक्षण किया जा चुका है कि यज्ञ में हवन सामग्री, गाय का घी और विशेष प्रकार के बने

हवनकुंड में विशाल स्तर पर यज्ञ का आयोजन करके पर्यावरणीय और अन्य अनेक समस्याओं से निजात पाया जा सकता है।

किसी भी समस्या के उत्पन्न होने के पूर्व ही उस पर विचार कर उसका शुभाशुभ निर्णय कर लेना वैदिक विचार धारा की अपनी विशेषता है। प्रकृति का पर्यावरण भी ऋषियों की दृष्टि से उपेक्षित नहीं रहा है। यजुर्वेद का ऋषि जब द्युलोक व अन्तरिक्ष के साथ छेड़खानी का निषेध करता है, वहीं पर वनस्पतियों, औषधियों, ग्रह–नक्षत्रों और वातावरण को प्राणी मात्र के लिए उत्तमोतम बनाए रखने की बात भी वेदों में बहुत ही उपयोगी ढंग से वर्णित है। वेदों में पर्यावरण के सन्तुलन के अनेकानेक उपायों का वर्णन मिलता है, जिनमें एक महत्वपूर्ण उपाय वानिकी है। ऋग्वेद के मंत्रों में वर्णित सुखदायक प्राण वायु की कामना तथा उसके देवत्व की कल्पना प्राचीन ऋषि की पर्यावरण के प्रति सजगता को दिखाती है। ऋग्वेद का ऋषि कहता है। "**वनस्पति वन आस्थापयध्वम्**" वहीं अथर्वण ऋषि वनस्पति से प्रार्थना करता है। "**वनस्पते जीवानां लोकमुन्नय**।" मैत्रायणी संहिता में वनस्पति को देव कहते हुए उसके लिए रक्षा की प्रार्थना की गई है। मैत्रायणी संहिता में वनस्पति को वायु रक्षक कहा गया है। सामाजिक वानिकी का व्यावहारिक स्वरूप हमें अर्थव वेद में प्राप्त होता है। अथर्ववेद के छठे काण्ड में एक सुन्दर भवन की कल्पना की गई है, जिसमें अन्य सभी सुखकारी सुविधाओं के साथ घर में कमलयुक्त तालाब व पुष्प युक्त दूब लगाने का निर्देश दिया गया है। मनुस्मृति में कहा गया है–ग्राम में चारों ओर सौ धनुष परिमित भूमि ग्राम्य वन के लिए छोड़नी चाहिए।

अथर्ववेद में जौ एवं चावल का रोग नाशक अन्न के रूप में वर्णन मिलता है। वहीं अखाद्य अन्नों के विष दूर करने की चर्चा भी वैदिक ऋषि ने की है। भूमि की जुताई, बुवाई का स्पष्ट वर्णन ऋग्वेद के कृषि सूक्त तथा अथर्ववेद में प्राप्त होता है। कृषि भूमि को योग्य बनाए रखने के लिए वेद में गोबर की खाद का उल्लेख मिलता है।

औषधि शब्द की व्युत्पत्ति करते हुए निरुक्तकार ने इन्हें ऊर्जा का स्रोत व प्रदूषण को दूर करने वाली माना है। ऋग्वेद में औषधियों को माता कहा गया है। अथर्ववेद इन्हें पुरुष की जीवनदायिनी मानता हुआ इन्हें पुरुष जीवनी के नाम से संबोधित करता है। यजुर्वेद का मंत्र है–**पृथिवि देवयजन्योषध्यास्ते मूलं मा हिंसिषम्।**

ऋग्वेद का अरण्यानी सूक्त वन की महत्ता का सुस्पष्ट प्रतिपादक है। अथर्ववेद के पृथिवी सूक्त में हरे वनों से आच्छादित पृथ्वी की कामना व संकल्पना सुनाई देती है। देश में 16 प्रतिशत चारा वनों से प्राप्त होता है। यह आश्चर्य जनक तथ्य है कि जंगल जलेबी का वृक्ष हमें तेजाबी वर्षा से मुक्ति दिला सकता है। वर्षा के मुख्य घटक सल्फर डाई–आक्साइड की सान्द्रता को यह वृक्ष 80 प्रतिशत तक अवशोषित कर लेता है। इसी प्रकार चीड़ के पेड़ मिट्टी से बेरीलियम धातु को तथा सेम व मटर के पौधे जमीन से 'मेंड़ेलेवियम्' जैसी भारी धातुओं के प्रदूषण से भूमि को मुक्त कर देते हैं।

वेद मंत्रों में पर्यावण संरक्षण

यजुर्वेद में शांति की कामना पर्यावरण के संदर्भ में बहुत ही उपयोगी और वैज्ञानिक है। जिसमें अनेक अवयवों का उल्लेख मिलता है। इसी प्रकार वनस्पतियों को पर्यावरण के लिए वरदान मानते हुए कहा गया है–**वनानां पतये नमः, वृक्षाणां पतये नमः, औषधीनां पतये नमः** आदि मंत्रों में वृक्षों, औषधियों और वनों को रुद्र कहा गया है। रुद्र को विषपान करने वाला कहा गया है। यजुर्वेद का मंत्र है–**या ते रुद्र, शिवा तनूः शिवा विश्वाहा भेषजी। शिवा रूतस्य भेषजो तया नो मृड़ जीवसे।।** अर्थात् रुद्र हमारी रक्षा करें। हम सबका जीवन सुखमय हो। अथर्ववेद में भी वनस्पतियों के सतत् उपयोग के साथ–साथ उनकी जड़ों को न काटने का आदेश है। जिससे उनका संरक्षण होता रहे। कितनी सूक्ष्म और संवेदन विवेचना वेद के इस मंत्र में मिलती है कि उषःकाल में वनस्पतियों (औषधियों) की जड़ों को न काटकर बल्कि टहनियों को काट कर उपयोग में लाना चाहिए।

अथर्ववेद में अनेक प्रकार की वनस्पतियों का वर्गीकरण कर कौन वनस्पति कब और किसके द्वारा तथा कैसे उखाड़ी या काटी जाए, इसका स्पष्ट

प्रावधान है। यजुर्वेद भी यही संदेश दे रहा है। **पृथिवि देव यजन्योषध्यास्ते मूलं मा हिसिषम।** अर्थात्– यह जो विद्वानों के श्रेष्ठ कार्य करने की जगह पृथ्वी है और उस पर जो औषधियाँ हैं उनकी वृद्धि करने वाली जड़ों को कभी नष्ट न करूं।

पर्यावरण की सजगता व्यक्तिगत स्तर पर ही नहीं राज्य स्तर पर भी बहुत ही आवश्यक है। इसी संदर्भ में यजुर्वेद वन जलाने वालों को राजा से दण्डित करने का स्पष्ट आदेश देता है।

हे राजन! जो वन को हानि पहुचाएँ उसको दण्डित कर उस भू–भाग से ही दूर रखने का कार्य कीजिए। यजुर्वेद में वृक्षों के आच्छादन को बढ़ाने हेतु समुचित उद्यम करने को कहा गया है– **नमों वृक्षभ्यो हरिकेषेभ्यो।** वृक्षों व हरे पत्तों के प्रति नम्र भाव हो। जल में उगने वाले पौधे पर्यावरण को बेहतर बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। **ऋग्वेद में कहा गया है– आपः औषधीरूत नोऽवन्तु, द्यौर्वना गिरयो वृक्ष केषाः।** अर्थात्– जल में उगने वाले पौधे, आकाश, वन तथा वृक्षों से आच्छादित पर्वत प्रदूषण को कम करते हैं। इसी प्रकार सुंगधित औषधियों, फलों, फूलों, पत्तों, डालियों और पेड़ों की जड़े भी पर्यावरणीय स्वच्छता में बहुत कारगर बताए गए हैं। सबसे रोचक तथ्य यह है कि पर्यावरण की समस्या के साथ पर्यावरण प्रदूषण से होने वाले नुकसान को कैसे ठीक किया जाए इसका भी वर्णन वेद के अनेक मंत्रों में किया गया है। इसी प्रकार घरों की बनावट, मार्गों की बनावट, चौपालों की बनावट, तालाबों की बनावट के साथ ही साथ गांवों की बसावट को पर पर्यावरण के अनुकूल रखने की बात वैदिक वांग्मय में की गई है। इसके अतिरिक्त ध्वनि, जल, भूमि प्रदूषण की समस्या और उसके समाधान का वर्णन वेदों में अत्यंत रोचक ढंग से मिलता है। जीवन का ऐसा कोई भी क्षेत्र नहीं जहां पर्यावरण के प्रति वेद में सजगता न पैदा की गई हो। इस प्रकार हम देखते हैं कि वेदों में पर्यावरण की रक्षा के साथ प्रदूषण पर भी अत्यंत सूक्ष्म ढंग से विचार किया गया है।

प्रेरक संदेश

उतिष्ठ जागृत प्राप्य वरान्निबोधत।
क्षुरस्य धारा निशिता दुरत्यया दुर्गपथस्तत् कवयो वदन्ति।।३/१४।।

अर्थ : भौतिक सुख (प्रेय मार्ग) की मूढ़ता में सोने वाले मनुष्यो ! उठो, जागो और श्रेष्ठ जनों का संग करके तपस्या द्वारा आध्यात्मिक आनंद (श्रेय मार्ग) को प्राप्त करो। आध्यात्मिक मार्ग (इन्द्रिय संयम से ईश्वर साक्षात्कार) छुरे की धार की तरह कठिन है परन्तु कल्याण का पथ है ऐसा आप्त पुरुषों का कहना है। जिसकी इन्द्रियां उस के वश में नहीं हैं, जिसका मन अशांत है जिसकी बुद्धि अस्थिर है तो सूक्ष्म बुद्धि का प्रयोग करके भी वह ब्रह्म को प्राप्त नहीं कर सकता।

अशब्दमस्पर्शमरुपमव्ययं तथाऽरसं नित्यमगन्धवच्च यत्।
अनाद्यनन्तं महतः परं ध्रुवं निचाय्य तं मृत्युमुखात् प्रमुच्यते।।३/१५।।

अर्थ : जो ब्रह्म शब्द–रहित, स्पर्श–रहित, रूप–रहित, रस–रहित और विकार–रहित = अविनाशी, अनादि, गन्धरहित, अनन्त, महतत्व से भी सूक्ष्म है और अचल है उस ब्रह्म को जानकर जन्म–मरण के प्रवाहरूप दुःख–बन्धन से जीवात्मा मुक्त हो जाता है। –(**कठोपनिषद् से**)

डॉ० भवानीलाल भारतीय : विनम्र श्रद्धांजलि

–डॉ. ज्वलंत कुमार शास्त्री

आर्यसमाज और ऋषि दयानन्द से सम्बन्धित सभी आवश्यक तथ्यों की जानकारी के स्रोत, वैदुष्य एवं विनम्रता के मूर्त्तिमान् विग्रह, पं० लेखराम के उत्तराधिकारी और लेखनी के महाधन प्रो० भवानीलाल भारतीय अपनी जीवन यात्रा (६ जून १९२८–११ सितम्बर २०१८) पूरी कर परलोक के लिए प्रस्थान कर गये। १७५ पुस्तकों तथा लगभग १५०० लेखों के रचनाकार वरेण्य भारतीय जी की उल्लेखनीय कृतियाँ तथा पावन स्मृतियाँ ही अब शेष रह गई हैं। ऋषि दयानन्द के जीवन चरित से सम्बद्ध ऐतिहासिक घटनाओं और तथ्यों के साथ–साथ सभी उपादान सामग्रियों के संकलन के लिए आजीवन परिश्रमी प्रो० भारतीय का एकमात्र व्यसन पढ़ना और लिखना था। दयानन्द की जीवनी और रचनाओं के विषय में जितना भी आज तक लिखा गया है उन सबको संकलित, प्रकाशित और सुचर्चित करते रहना यही उनकी खासियत थी। आर्यसमाज के सिद्धान्त और इतिहास को शोधपूर्ण रीति से पुस्तकों और पत्र–पत्रिकाओं में निरन्तर प्रस्तुत करने में उनकी सर्वाधिक रुचि थी। प्रमाद, विश्राम और थकावट उन्हें छू तक नहीं पाई थी। उनके लिए ऋषि दयानन्द और आर्यसमाज ही सब कुछ (सर्वस्व) था। उनके लेखन का क्षितिज बहुत व्यापक है। वेद, उपनिषद्, दर्शन, आर्य सिद्धान्त, संस्कृत साहित्य, हिन्दी साहित्य, संस्मरण, जीवनी, आलोचना, सम्पादन और अनुवाद से लेकर आज तक के सभी आर्य लेखकों और विद्वानों के लेखकीय–साहित्य का भी संग्रह और समीक्षण करना उनके ही बूते की बात थी।

विगत सात दशकों (७० वर्ष) तक फैला हुआ उनका लेखकीय व्यक्तित्व और कृतित्व किसी भी सुलेखक के लिए स्पृहा का विषय हो सकता है। देशी या विदेशी किसी भी लेखक के द्वारा स्वामी दयानन्द और आर्यसमाज की की गई आलोचना उन्हें सहन नहीं होती थी और उसका तत्काल उत्तर लिखकर वे आर्य पत्रों में प्रकाशित करते थे। पं० गुरुदत्त, पं० लेखराम, स्वामी श्रद्धानन्द, लाला लाजपत राय से लेकर पं० भगवद्दत्त, गंगाप्रसाद उपाध्याय, धर्मदेव विद्यामार्त्तण्ड, युधिष्ठिर मीमांसक और स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती प्रभृति सैकड़ों आर्य विद्वानों की कृतियों से पाठकों को परिचित कराने में उनको व्यक्तिगत प्रसन्नता और गौरव की अनुभूति होती थी। आज से ५० वर्ष पूर्व १९६८ ई० में उनकी पी–एच०डी० थीसीस 'ऋषि दयानन्द और आर्यसमाज की संस्कृत साहित्य को देन' पं० युधिष्ठिर

मीमांसक की देख-रेख में छपी थी। तब से आज तक ऋषि दयानन्द और आर्यसमाज से सम्बद्ध किसी का भी शोध प्रबन्ध डॉ० भारतीय या उनकी पुस्तकों की सहायता लिए बिना नहीं लिखा जा सका है। आस्ट्रेलिया के प्रो० जार्डन्स और अमेरिकी प्रोफेसर लेविलिन् से लेकर डॉ० प्रमा शास्त्री के शोध-प्रबन्ध 'स्वामी दयानन्द के हिन्दी लेखन का साहित्यिक, भाषिक और शैलीगत अध्ययन' जैसे अधुनातन अनुसन्धान-ग्रन्थ इसके प्रमाण हैं। सैकड़ों शोधार्थियों ने उनकी पुस्तकों से सामग्री संकलन की है और भावी शोधकर्मी भी डॉ० भारतीय और उनकी रचनाओं के अधमर्ण रहेंगे। संक्षेपत: ऋषि दयानन्द और आर्यसमाज के इतिहास, ग्रन्थ, सिद्धान्त और विचारों के वे 'इनसाइक्लोपीडिया' (विश्वकोष) थे। लेखनी के धनी मसिजीवी डॉ० भारतीय की १७५ पुस्तकों में से चुनिन्दाँ रचनाओं का उल्लेख किये बिना यह भावाञ्जलि अधुरी ही रहेगी। अत: भारतीयजी की कतिपय कृतियों का नाम और प्रकाशनवर्ष प्रस्तुत है—

१. नवजागरण के पुरोधा : महर्षि दयानन्द सरस्वती, प्रथम संस्करण १९८३, द्वितीय परिवर्द्धित संस्करण २००९।
२. ऋषि दयानन्द : सिद्धान्त और जीवन दर्शन, २०१३।
३. स्वामी दयानन्द और अन्य भारतीय धर्माचार्य, प्र० सं० १९४९, द्वि० सं० २००२।
४. महर्षि दयानन्द और राजा राममोहन राय, १९५७।
५. महर्षि दयानन्द और स्वामी विवेकानन्द :तुलनात्मक अध्ययन, १९७५, १९८६, १९९५, (उड़िया अनुवाद-१९९४)।
६. दयानन्द साहित्य सर्वस्व, १९८३।
७. ऋषि दयानन्द के भक्त, प्रशंसक और सत्संगी, १९८६।
८. महर्षि दयानन्द प्रशस्तिकाव्यम् (संस्कृत पद्य संग्रह), १९८६।
९. स्वामी दयानन्द सरस्वती : व्यक्तित्व, विचार और मूल्यांकन, २०००।
१०. स्वामी दयानन्द सरस्वती : पश्चिम की दृष्टि में, २००१।
११. स्वामी दयानन्द सरस्वती : सम सामयिक पत्रों में, २००३।
१२. स्वामी दयानन्द सरस्वती के पत्र-व्यवहार का विश्लेषणात्मक अध्ययन, २००२।
१३. ऋषि दयानन्द और आर्यसमाज की संस्कृत साहित्य को देन, १९६८।
१४. वेदाध्ययन के सोपान, १९७४।
१५. वैदिक स्वाध्याय (शोधपूर्ण निबन्ध), १९९२।
१६. ऋग्वेदीय-यजुर्वेदीय-सामवेदीय-अथर्ववेदीय अध्यात्म शतक (प्रत्येक वेद की १००-१०० ऋचाओं की भावपूर्ण आध्यात्मिक व्याख्या), १९९९-२०००।

१७. आर्यसमाज के वेदसेवक विद्वान्, १९७४, २००७।
१८. उपनिषदों की कथाएँ, १९८३, १९९५, १९९६।
१९. स्वामी दयानन्द के दार्शनिक सिद्धान्त, १९८२।
२०. विश्वधर्मकोश : सत्यार्थप्रकाश, १९७८, २००२।
२१. आर्यसमाज के शास्त्रार्थ महारथी, १९७०, १९८२।
२२. परोपकारिणी सभा का इतिहास, १९७५।
२३. आर्यसमाज का अतीत और वर्त्तमान, १९७५।
२४. आर्यसमाज : अतीत की उपलब्धियाँ और भविष्य के प्रश्न, १९७८।
२५. आर्यसमाज के पत्र और पत्रकार, १९८१।
२६. आर्यसमाज विषयक साहित्य परिचय (सन्दर्भ ग्रन्थ), १९८५।
२७. आर्यसमाज का इतिहास (पञ्चम भाग–साहित्य खण्ड), १९८६।
२८. समग्र क्रान्ति का सूत्रधार–आर्यसमाज, २००१।
२९. हिन्दी काव्य को आर्यसमाज की देन, २०००।
३०. भारत के नारी–जागरण में आर्यसमाज की भूमिका, २०००।
३१. आर्य लेखक कोश (सन्दर्भ ग्रन्थ), १९९१।
३२. जर्मनी के संस्कृत विद्वान्, २०००।
३३. शुद्ध गीता, १९६६।
३४. श्रीमद्भगवद्गीता : एक सरल अध्ययन, १९६६।
३५. श्रीकृष्णचरित, १९५८, १९९१, १९९८।
३६. ब्रह्मवैवर्त्तपुराण : एक समीक्षा, १९६९।

सम्पादित महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ

३७. दयानन्द दिग्विजयार्क (गोपालराव हरि शर्मा), १९७४, १९८३।
३८. महर्षि दयानन्द सरस्वती का जीवनचरित्र (पं० लेखराम), १९८४, १९८८।
३९. श्री श्रीदयानन्द चरित [(सत्यबन्धु दास) बांग्ला का हिन्दी अनुवाद], १९८६।
४०. युगप्रवर्त्तक स्वामी दयानन्द (लाला लाजपत राय), १९९८, २००५।
४१. ऋषि दयानन्द के चार लघुजीवन चरित, १९९८।
४२. दयानन्द चरित, प्रथम संस्करण (देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय), २०००।
४३. ऋषि दयानन्द के शास्त्रार्थ और प्रवचन, १९८२।
४४. महर्षि दयानन्द की आत्मकथा, १९७५, १९८३।
४५. पूना प्रवचन (उपदेश मञ्जरी), १९७६, १९८५।
४६. चतुर्वेद विषय सूची (स्वामी दयानन्द सरस्वती), १९७१।
४७. भागवत खण्डनम् (स्वामी दयानन्द सरस्वती), १९९९।

अनूदित/सम्पादित ग्रन्थ

४८. आर्यसमाज (लाला लाजपत राय), १९८२, १९९४, २००१।
४९. योगिराज श्रीकृष्ण (लाला लाजपत राय), १९९८।
५०. लाला लाजपत राय की आत्मकथा, २००५।
५१. लाला लाजपतराय ग्रन्थावली (९ खण्ड)।
५२. स्वामी श्रद्धानन्द ग्रन्थावली (९ खण्ड)। इस ग्रन्थावली में स्वामी श्रद्धानन्द की अंग्रेजी पुस्तक 'Inside Congress' का हिन्दी अनुवाद तथा स्वामी श्रद्धानन्द और आचार्य रामदेव की 'The Arya Samaj its Detractors : A Vindication' अंग्रेजी पुस्तक का हिन्दी अनुवाद—'आर्यसमाज और उसके निन्दक : एक प्रतिवाद' भी शामिल है।
५३. मीमांसा दर्शन (उत्तरार्ध) श्री मयाशंकर शर्मा कृत मीमांसा दर्शन के गुजराती अनुवाद का हिन्दी अनुवाद।
५४. सूरज बुझाने का पाप (श्री केशुभाई देसाई) गुजराती भाषा में ऋषि दयानन्द के जीवन चरित को लक्ष्य कर लिखे गये उपन्यास का हिन्दी अनुवाद, १९९४ ई०।

डॉ० भारतीय ने अपनी प्रतिनिधि रचना 'नवजागरण के पुरोधा : महर्षि दयानन्द सरस्वती' (द्वितीय संस्करण, २००९ ई०) के उपसंहार में लिखा है—

मेरी चेष्टा थी कि मेरा पुस्तक संग्रह स्वामी दयानन्द तथा उनके द्वारा स्थापित आर्यसमाज विषयक ग्रन्थों, पत्र-पत्रिकाओं तथा अन्य प्रकार के दस्तावेजों का अद्वितीय संग्रह हो। मैं इस कार्य में सफल हुआ। मेरे पुस्तकालय में एतद् विषयक लगभग पाँच हजार ग्रन्थ तथा पत्र-पत्रिकाओं की पाँच सौ दुर्लभ फाइलें थीं।

सत्यार्थप्रकाश के विभिन्न बाईस भाषाओं में अनुवाद, उनके अन्य ग्रन्थों के विभिन्न संस्करण, टीका, व्याख्या आदि ग्रन्थों के अतिरिक्त स्वामीजी के जीवन-चरित बहुसंख्या (शताधिक) में थे। अब यह दुर्लभ ग्रन्थ-संग्रह दण्डी विरजानन्द के स्मारक रूप में कुरुक्षेत्र में बनाये जानेवाले एक शोध ग्रन्थालय को दे दिया गया है। तथापि प्रकाशित-अप्रकाशित पुरा वृत्त, दस्तावेज तथा पत्रों की कतरनें लगभग बीस वेष्टनों (बस्तों) में मेरे पास हैं, जिनका उपयोग स्वामी दयानन्द के अध्ययन तथा तद्विषयक लेखन के लिए भावी शोधकर्त्ताओं एवं लेखकों द्वारा किया जा सकता है।

डॉ० भारतीय जैसे मनीषी लेखकों के लिए ही संस्कृत की यह सूक्ति चरितार्थ होती है—**कीर्त्तिरक्षरसंयुक्ता चिरं निष्ठति भूतले।**

सम्पर्क—चलभाष : ९४१५१८५५२१

दयानन्द की क्रान्ति शेष है!

मनुष्यों के द्वारा दो प्रकार के प्रयोजनों के लिए प्रयत्नशील होना चाहिए।

- चक्रवर्ती राज्यश्री की प्राप्ति करने हेतु।
- सब विद्याओं का अध्ययन करके उनका सर्वत्र प्रचार करने के लिए।

उक्त दोनों लक्ष्यों की सिद्धि ही स्वामी दयानन्द सरस्वती की क्रान्ति का उद्देश्य है। स्वतंत्रता और स्वाभिमान के बिना उक्त दोनों कार्य संपादित करना संभव नहीं। इसलिए महर्षि दयानन्द ने यहीं से अपनी क्रान्ति का सूत्रपात किया। शिक्षा ही श्रेष्ठ साधन है यह समझ कर सबको शिक्षित करने का कार्य प्रारम्भ किया, 'सबको पढ़ने का अधिकार है' बलपूर्वक घोषणा करके पाठशालाएँ, विद्यालय, गुरुकुल बनाने का यत्न किया। इनमें पढ़ने वाले विद्यार्थियों में स्वतंत्रता और स्वाभिमान भर कर उन्हें राष्ट्रवादी बनाया और प्राणपण से इनकी प्राप्ति के लिए प्रेरित किया। परिणाम स्वरूप देश स्वतंत्र हुआ। स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए बहुत बड़ी कीमत चुकानी पड़ी। लाखों लोगों को प्रताड़ना सहनी पड़ी, हजारों ने फांसी के फंदे पर लटक कर जान गवाई, देश को काटकर तीन टुकड़े बनाए गए, स्वतंत्रता भी ऐसी मिली जैसे किसी पिंजरे में बंद पक्षी के पंख काट कर पिंजरे से बाहर छोड़ दिया जाए।

न हमारी भाषा, न हमारा संविधान, न हमारी शिक्षा, न हमारा धर्म, कुछ भी तो हमारा नहीं है। आज भी पराई जीवन शैली हम पर थोपी हुई है। अभी हम सचमुच स्वतंत्र नहीं हुए। अतः दयानन्द की क्रान्ति शेष ही है। पुनरपि निम्न बिन्दुओं पर विचार करने की आवश्यकता हैं–

१. हमारे देश का नाम आर्यावर्त या भारत हो।
२. हमारी एक भाषा हिंदी हो जिसे दयानन्द ने आर्यभाषा की संज्ञा दी है।
३. हमारा एक धर्म और एक धर्म ग्रंथ वेद हो।
४. हमारी शिक्षा प्रणाली आर्ष परम्परा पर आधारित हो। शिक्षा का माध्यम हिंदी और संस्कृत हो।
५. शिक्षा और चिकित्सा सर्व सुलभ हो, समान हो।
६. न्याय हमारी भाषा में शीघ्र और कम खर्च में प्राप्त हो।
७. हमारे किसानों मजदूरों को भरपूर भरण–पोषण प्राप्त हो।
८. हमारे बालकों और स्त्रियों को सुरक्षा प्राप्त हो।
९. पाखंडी साधु संतों, ज्योतिषियों की ठगी से समाज को बचाया **जावे**।
१० चोर, मुफ्तखोर, व्यभिचारी, नशेबाज गद्दार भ्रष्ट लोग हम पर शासन न करें।
११. नशीले पदार्थों के सेवन तथा अन्य सभी दुर्व्यसनों से मुक्त समाज हो।
१२. छूतछात, ऊँच–नीच, नस्ली अहंकार से मुक्त गुण कर्मानुसार सब की जीविका सुलभ हो।
१३. विवाह सम्बन्ध गुण कर्मानुसार हों।

उपरोक्त विचारों (बिन्दुओं) को देश में लागू करके ही हम ऋषि दयानन्द के स्वप्नों को साकार कर पुनः भारत को जगत् गुरु बना सकते हैं। — **(अध्यक्ष की कलम से)**

देवत्तं ब्रह्म गायत (ऋ. १–३७–४) – देव परमेश्वर के लिए ब्रह्म (वेद) का गान करो।

मूर्तिपूजा के अभिशाप से हिन्दू समाज की एकता असम्भव

- महापण्डित गंगाप्रसाद उपाध्याय

यह एक प्रश्न है कि क्या मूर्तिपूजा ने किसी को मुक्ति पाने में सहायता की है? परन्तु यह एक निर्विवाद सत्य है कि भारत में तथा उसी तरह अन्य स्थानों पर भी मूर्तिपूजा करने वाले इतनी सरलता से बहकाते जाते रहे हैं कि अपनी सांसारिक वस्तुओं से भी हाथ धो बैठते हैं। हिन्दू इतिहास ऐसे उदाहरणों से भरा पड़ा है। महमूद गजनवी द्वारा सोमनाथ की लूट राजपूतों की कायरता के कारण नहीं हुई। यदि बहादुर दाहिर के लोगों को अंधविश्वासी पुजारियों ने गुमराह नहीं किया होता तो आज हिन्दू धर्म का इतिहास पूर्णतया भिन्न होता। जरा उस रक्तपात की भयानकता, लूटपाट और दासता की कल्पना कीजिए जो सोमनाथ की लूट के बाद हुई। अंधविश्वासी मूर्तिपूजा में इन सब के कारणों को खोजने का प्रयत्न करें। सोमनाथ की मूर्ति ने ही महमूद को लालायित किया था और उसे यहाँ आने एवं मूर्ति तोड़ने का लोभ हुआ था। पुजारियों को आशा थी कि मूर्ति उनकी सहायता करेगी। मूर्तिपूजक राजपूतों ने अपनी भुजाओं की शक्ति पर विश्वास करने की अपेक्षा पुजारियों द्वारा उठायी गई व्यर्थ आशाओं पर निर्भर किया, जिसका परिणाम बर्बादी था। काशी अर्थात् बनारस हिन्दू मूर्तिपूजा का प्रसिद्ध गढ़ पाषाणपूजा के विकराल दुष्परिणामों का जीता जागता प्रमाण है। जब धर्मान्ध मुसलमानों ने मंदिर पर आक्रमण किया तो विश्वनाथ की प्रतिमा कुएं में कूद गई और धूर्त पुजारियों ने अज्ञानी लोगों को अपने पंजे में फंसाए रखने के लिए एक कहानी गढ़ी कि विश्वनाथ राक्षसों का मुँह देखना पसंद नहीं करते। ऐसी गप्पे केवल मूर्तिपूजकों में ही संभव हैं। यदि आप सूक्ष्मता से जनसाधारण के दैनिक जीवन का निरीक्षण करें तो भयंकर हानियों के उदाहरण पाएंगे जो कि लगातार पंडितों, पुजारियों, ज्योतिषियों के दल द्वारा किए जा रहे हैं जिनकी जीविका का मुख्य साधन ही मंदिर का चढ़ावा है। जाति के मूल्य पर कमाई जाने वाली जीविका की अनुमति कभी नहीं दी जानी चाहिए। इन सब विचारों ने ही स्वामी दयानन्द को इतनी उग्रता से मूर्तिपूजा का खण्डन करने की प्रेरणा दी और कहा कि हिन्दू समाज के विघटन को रोकने का उपाय सरलतापूर्वक किया जा सकता है यदि मूर्तिपूजा छोड़ दी जाए तो।

स्रोत – हिन्दुत्व के रक्षक ऋषि दयानन्द।

विद्या– जिससे ईश्वर से लेके पृथिवी पर्यन्त पदार्थों का सत्य विज्ञान होकर उनसे यथायोग्य उपकार लेना होता है इसका नाम विद्या है।

अविद्या– जो विद्या से विपरीत है भ्रम, अन्धकार और अज्ञानरुप है; इसलिए इसको अविद्या कहते हैं।

जिस देश मे वेद विद्या के जितेन्द्रिय विद्वान नही होते वहाँ पाखंडी धूर्त और दुराचारी लोग गुरू बनकर के समाज को ठगते हैं।

–महर्षि दयानन्द सरस्वती

उत्तानपादासन के लाभ

उत्तानपादासन का अर्थ क्या होता है– उत्तान का अर्थ है ऊपर उठा हुआ और पाद का अर्थ है पांव। इस आसन में पीठ के बल लेटकर पांव ऊपर उठाए जाते हैं, इसीलिए इसे यह नाम दिया गया है। उत्तानपादासन योग एक बहुत ही महत्वपूर्ण योगाभ्यास है। उत्तानपादासन पेट की चर्बी को कम करने और पेट को अंदर करने में अहम भूमिका निभाता है। यह आसन इतना प्रभावशाली है।

उत्तानपादासन करने की प्रक्रिया

जमीन पर आराम से लेट जाएं और पांव फैला लें। पैरों की बीच दुरी नहीं होनी चाहिए। हाथ शरीर के निकट रखे रहने दें। सांस लेते हुए पांवों को मोड़े बगैर धीरे–धीरे ३० डिग्री पर उठाएं। धीरे –धीरे सांस लें और फिर धीरे धीरे सांस छोड़े और इसी मुद्रा में रहें। लम्बा सांस छोड़ते हुए दोनों पांव नीचे लाएं। यह चक्र हुआ। इस तरह से आप ३ से ५ चक्र करें।

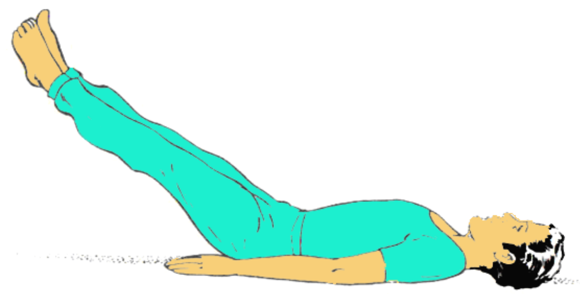

उत्तानपादासन के लाभ

पेट की चर्बी कम करने के लिए : अगर आप पेट की चर्बी से परेशान हैं तो आपको उत्तानपादासन करना चाहिए। उत्तानपादासन पेट की चर्बी को कम करने और पेट को अंदर करने में अहम भूमिका निभाता है। यह आसन इतना प्रभावशाली है कि इसके नियमित अभ्यास करने से शरीर में एब्स बनने लगते हैं। यह मोटापा और तोंद का दुश्मन है।

नाभि संतुलन में : इससे नाभि केंद्र (नाभिमणिपूरचक्र) संतुलित होता है। नाभि के इलाज एवं नाभि को ठीक करने के लिए यह एक बेहतरीन योगाभ्यास है। अगर नाभि अपने जगह से हट गई हो तो इसके लिए उत्तानपादासन सबसे बेहतरीन योग है।

पेट की पेशियों के लिए : अगर आपको अपने पेट की पेशियों को मजबूत बनाना हो तो इस आसन का अभ्यास जरूर करें। यह पेट की पेशियों को सबल ही नहीं बनाता बल्कि इसके निर्माण में भी सहायता करता है।

पेट दर्द में लाभकारी : यह पेट दर्द, उदर वायु, अपच और अतिसार में लाभकारी होता है।

पैरों के लिए लाभकारी : इसके नियमित अभ्यास से आप अपने पैरों को मजबूत एवं सबल बना सकते हैं।

घुटने के लिए फायदेमंद : यह आसन घुटने के लिए लाभकारी है।

कमर मजबूत करने में : पहले पहले यह आपके कमर को परेशान कर सकता है लेकिन कुछ अभ्यास के बाद यह आपके कमर को मजबूत करते हुए कमर दर्द को कम करता है।

पाचन के लिए : यह आपके पाचन क्रिया को मजबूत बनाता है और भोजन को पचाने में मदद करता है।

ऊर्जा बढ़ाने में : इसके नियमित अभ्यास से आप अपने शरीर की ऊर्जा को बढ़ा सकते हैं।

पेट गैस कम करने में : इसके अभ्यास से पेट गैस को कम किया जा सकता है और साथ ही साथ अपच से भी निजात मिल सकती है।

कब्ज कम करने में : यह आसन कब्ज को हमेशा हमेशा के लिए खत्म कर सकता है।

उत्तानपादासन सावधानी

कमर दर्द : जिनके कमर में दर्द हो उन्हें यह आसन नहीं करनी चाहिए।

साइटिका : साइटिका से पीड़ित होने पर इस आसन का अभ्यास न करें।

गर्भावस्था एवं पेट सर्जरी : गर्भावस्था में और पेट सर्जरी होने पर इस आसन का अभ्यास नहीं करनी चाहिए।

नित जीवन के संघर्षों से
जब टूट चुका हो अन्तर्मन,

तब सुख के मिले समन्दर का
रह जाता कोई अर्थ नहीं।।

जब फसल सूख कर जल के बिन
तिनका –तिनका बन गिर जाये,

फिर होने वाली वर्षा का
रह जाता कोई अर्थ नहीं।।

सम्बन्ध कोई भी हों लेकिन
यदि दुःख में साथ न दें अपना,

फिर सुख में उन सम्बन्धों का
रह जाता कोई अर्थ नहीं।।

छोटी–छोटी खुशियों के क्षण
निकले जाते हैं रोज जहां,

फिर सुख की नित्य प्रतीक्षा का
रह जाता कोई अर्थ नहीं ।।

मन कटुवाणी से आहत हो
भीतर तक छलनी हो जाये,

फिर बाद कहे प्रिय वचनों का
रह जाता कोई अर्थ नहीं।।

सुख–साधन चाहे जितने हों
पर काया रोगों का घर हो,

फिर उन अगनित सुविधाओं का
रह जाता कोई अर्थ नहीं।।

– **ब्राजीली कवियत्री ''मार्था मेरिडोस''**

आर्य लेखक बन्धु सादर आमंत्रित

आर्य लेखक परिषद् के तत्वावधान में 25 व 26 अक्टूबर, 2018 को दो दिवसीय आर्य लेखक संगोष्ठी का विशेष आयोजन किया गया है।

गोष्ठी का आधार विषय– वेद और महर्षि दयानन्द की प्रतिष्ठा विश्व में कैसे हो।

गोष्ठी में वेद के विविध पक्षों और महर्षि दयानन्द के अतुलित कार्यों, विचारों, सुधारों, शास्त्रार्थों, लेखन, प्रवचन, भास्कर जैसे व्यक्तित्व पर शोध पत्र सादर आमंत्रित हैं। आर्य लेखक बन्धु शोध पत्र के विषय या अन्य विषय, जिस पर लिखना या बोलना चाहते हैं, अविलम्ब सूचित करें।

गोष्ठी स्थल
अंतरराष्ट्रीय आर्य महासम्मेलन परिसर
सेक्टर–10, रोहणी, नई दिल्ली
(पं लेखराम हाल–लेखक मंच पर)

आर्य लेखक परिषद् पत्रिका और आर्य लेखक परिषद् की वेबसाइट के लिए आर्य लेखक बन्धु अपनी सर्वश्रेष्ठ रचनाएँ भेंजे।

आर्य लेखक परिषद का महान संकल्प

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

आइए, संकल्प करें - दुनिया को फिर आर्य (श्रेष्ठ) बनाएंगे

हे देह विश्व आत्मा है भारत माता
सृष्टि प्रलय पर्यन्त अगर यह नाता